''पद्मपुराण कालीन नारी के रूप''

'सुश्री ललिता यादव

जीवन रूपी रथ में नारी और नर दो पहिये हैं दोनों में से किसी एक के बिना जीवन रूपी रथ नही चल सकता। नारी शब्द 'नृ' अथवा 'नर' से बना है। ऋग्वेद में 'नृ' का प्रयोग वीरता का कार्य करना, दान देना तथा नेतृत्व करने के अर्थों में प्रयोग हुआ है। स्त्री का नारी नाम भी इन्हीं विशेषताओं के कारण पडा होगा। वैदिक साहित्य में 'स्त्री' शब्द नारी के लिये सबसे अधिक प्रयुक्त हुआ हैं। पाल और प्राकृत युग में भी वह सजीव रहा है। अपभ्रंश काल इसे अपने स्थान से डिगा नही सका और आज भारत की सभी प्रसिद्ध भाषाओं में इसकी अखण्ड परम्परा सुरक्षित हैं। स्त्री की व्युत्पत्ति के विषय में निरूक्तकार का मत है कि स्त्री शब्द 'स्त्यै' धातु से बना हैं। 'स्त्रियः स्त्यायतेः अपत्रपणकर्मण' स्त्री को स्त्री इसलिये कहते है कि वह लजाती है।1 पुरूष को जन्म देने वाली नारी है इसी कारण नारी को 'जाया' भी कहा जाता है इस शब्द का प्रयोग ऐतरेय ब्राह्मण, शतपथ ब्राह्मण, मैत्रायंणी संहिता और मनुस्मृति में पाया जाता है।2

नारी भारतीय संस्कृति में अतीव उन्नत गौरव की अधिकारिणी सदा से रही हैं। भारतीय समाज में नारी त्याग और तपस्या का प्रतीक है। आदिम युग में नारी की स्थिति संतोषजनक थी, क्योंकि इस समय मातृ सत्तात्मक समाज में नारी बलवंती एवं सम्पत्ति और गृहस्वामिनी मानी जाती थी। वैदिक काल में सामाजिक जीवन में नारी की स्थिति जितनी ऊँची थी बाद में कभी नही रही। स्त्रियां उच्च शिक्षा प्राप्त कर वेद शास्त्रों में प्रवीण होती थी। स्त्री परिवार में 'गृहलक्ष्मी' मानी जाती थी और परिवार के सभी सदस्य उसका सम्मान किया करते थे।

वैदिक युग में नारी जीवन के सभी क्षेत्रों में सुख और शांति का आलोक बिखरा हुआ था। विकास की ऐसी कोई भी श्रृंखला न थी जिस पर नारी अपने चरण रखने से वंचित रह सकी हों। इस युग में नारी के कन्या, पत्नी, माता और ऋषि रूप में दर्शन होते है। इस काल की कन्या कुटुम्ब के स्नेह का धन थी, परिवार के कल्याण और सौख्य की अधिष्ठात्री, पिता के दोनों इहलोक तथा परलोक की आज्ञा, जननी की सहज अनुगता, सहचरी, भाई के पौरूष की मर्यादा, बहिनों की सखा और समस्त परिवार की पावन ज्योति थी।

ऋग्वेद के अनुसार वैदिक काल में जीवन के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। उपनिषद्काल में नारी का वह आदर सम्मान और अधिकारों की दृष्टि से वह महत्व न रहा, जो उसे वैदिक काल में प्राप्त था। जबकि पौराणिक काल में स्त्रियों के पठन–पाठन की समुचित व्यवस्था थी। स्त्री को विद्या और सदगुण सम्पन्न बताया गया है।

जैन पुराणों में नारी के मातृरूप, पतिव्रत धर्म, और सतीत्व धर्म पर अधिक बल दिया गया है। उस युग की नारी में कर्त्तव्य पालन और त्याग की भावना विद्यमान थी एवं स्त्रियां शासन सम्बन्धी प्रबन्ध करने में भी कुशल थी।

पुत्री के रूप में – नारी :–

पुराण साहित्य में कन्या जन्म को अभिशाप नही माना गया है, कन्या का पालन पोषण, शिक्षा आदि पुत्रवत ही होता था। उत्तम चेष्टाओं से युक्त निर्दोष विनय को धारण करने वाली कन्या परिवार में सभी को प्रिय होती थी।3

पिता के घर पुत्री का लालन–पालन बडे स्नेह से होता था तथा उनकी शिक्षा का पूर्ण प्रबन्ध किया जाता था। उन्हें गन्धर्व आदि विद्याओं में निपुण बतलाया गया है उदाहरणार्थ केकया क्रमशः नृत्यकला4, संगीतकला5, वाद्ययंत्र विद्या6, नाट्यकला7, लिपिज्ञान8, भाषणचातुर्य अर्थात् उक्ति कौशल9, चित्रकला10, पुस्तकर्म11, मालानिर्माण कला12, सुगन्धित पदार्थ निर्माण13, आस्वाधविज्ञान14, रत्नों के लक्षण15, नाना उपकरण बनाना16, मान अर्थात् तुलामाना, कालमान का ज्ञान17, बेलबूटा खींचना अथवा भूतिकर्म, निधि ज्ञान अर्थात् गडे हुए धन का ज्ञान, रूप ज्ञान, व्यापार कला, जीव विज्ञान18, चिकित्सा विज्ञान19, विभिन्न क्रीडाएं20, लोकज्ञान21, संवाहन कला22, वेशकौशल कला23 इत्यादि समस्त कलाओं में पारगामिनी थी। विभिन्न कलाओं में पारंगत होने पर ही पिता को कन्या के विवाह की चिन्ता होने लगती थी।24 युवावस्था प्राप्त होने पर ही पिता कन्या का विवाह योग्य वर के साथ कर देता था।25 योग्य वर के नौ गुणों का उल्लेख मिलता है – कुल, शील, ध ान, रूप, समानता, बल, अवस्था, देश और विद्या–गम आदि। इन सब में कुल को ही श्रेष्ठ गुण माना गया हैं जिस वर में कुल नामक का प्रथम गुण नही होता था उसे कन्या नही दी जाती थी।26 कभी–कभी कन्याएं वर का चयन स्वयंवर में करती थी27 एवं गन्धर्व विवाह भी करती थी किन्तु माता–पिता द्वारा योग्य वर ढूंढ कर विधिवत विवाह करने की पद्धति ही समाज में प्रचलित थी।28 यह भी उल्लेखनीय है कि पुराणकालीन समाज में कन्या का विवाहित होना परम आवश्यक नही था अनेक ऐसे उल्लेख दृष्टिगोचर होते है जिनसे ऐसा स्पष्ट होता है कि कन्याएं आजीवन अविवाहित रहकर आत्मकल्याण में संलग्न

शोध छात्रा, जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

होती थी। कभी–कभी कुमारी कन्याएं वैराग्यवश परिव्राजिका की दीक्षा ग्रहण कर लेती थी।29 जैनेत्तर मत्स्य पुराण में भी कन्या के रूप में स्त्री को महत्वपूर्ण स्थान प्रदत्त है। यह भी कहा गया है कि ''शील सम्पन्न कन्या दस पुत्रों के समान होती है''।

उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि पद्मपुराण कालीन समाज में कन्या के रूप में स्त्री की दशा अत्यन्त उन्नत थी। वर्तमान समय की तरह कन्या जन्म को बुरा नही माना गया बल्कि कन्याओं को परिवारजनों का अगाध स्नेह मिलता था, उनकी शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जाती थी। युवा होने पर ही उनका विवाह निश्चित किया जाता था अर्थात् बाल विवाह नही होता था।

माता के रूप में – नारी :–

स्त्री के जननी रूप को सर्वथा सम्मानित स्थान प्राप्त रहा है तथा माता को ही संसार में सर्वश्रेष्ठ बन्धु एवं प्रथम गुरू कहा गया है। पदमपुराण कालीन समाज में उसे विशिष्ट स्थान प्राप्त था। माता के रूप में नारी अपरिमित श्रद्धा का भाजन थी विजयाभिगमन के अवसर पर लव और कुश माता को प्रणाम करके मंगालाचारपूर्वक घर से निकले थे।30

वह व्यक्ति पुण्यात्मा है जो किकर भाव से माता की सेवा में तत्पर होता है31 जैनाचार्यों की दृष्टि में माताओं के लिये पुत्र प्रेम, पति प्रेम से भी उच्च होता है। पति से स्त्री का प्रेम विचलित भी हो सकता हैं, किन्तु अपने दूध से परिपुष्ट पुत्र पर उसका वात्सल्य कभी विचलित नही होता।32 जगत में मां के लिये पुत्र वियोग से बढकर कोई दुख नही है, पुत्र वियोग में उसकी स्थिति रूदन करती हुई कुररी के समान हो जाती है और आसनासन अच्छा नही लगता पुत्र वियोगिनी माता नव प्रसूता गाय की तरह पुत्र मिलन के लिये व्याकुल रहती है।33 पारम्परिक पुराणों में माता को संसार में सर्वोच्च सम्मान का अधिकारी बताया है।

पत्नी के रूप में – नारी :–

विवेच्य पुराण में पत्नी के लिये 'माम' शब्द व्यवहत हुआ है।34 वर्तमान समय की तरह ही प्राचीन काल में भी स्त्रियां अपने पति के प्रत्येक कार्य में सहयोग दिया करती थी। पति–पत्नी दोनों मिलजुलकर कार्य किया करते थे। किसी प्रकार की शंका या कार्य उपस्थित होने पर पत्नी निःसंकोच पति के पास जाकर शिष्टाचार पूर्वक निवेदन करती थी। सोलह स्वप्न दिखाई देने पर मरूदेवी पति के पास जाकर नीचे आसन पर बैठी और उत्तम सिंहासन पर आरूढ़ हृदयवल्लभ को हाथ जोडकर क्रम से स्वप्नों का निवेदन किया था।35

पत्नी के रूप में नारी पति को कुमार्ग से भटकने से बचाने का सदैव प्रयत्न करती थी। सीता की प्राप्ति हेतु युद्ध में प्रवृत्त रावण को समझाती हुई मन्दोदरी कहती है कि – हे नाथ! ''आपका यह मनोरथ अत्यन्त संकट की घडी में प्रवृत्त हुआ है। अतः इन इन्द्रिय रूपी घोडों को आप शीघ्र रोक लीजिए। आप तो विवेक रूपी सुदृढ़ लगाम को धारण करने वाले हैं।'' इस प्रकार नारी अपने पति को बुरे कार्य करने से मना करती थी36 और उसका सही मार्गदर्शन भी किया करती थी।

पद्मपुराण के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गृहपत्नियों में स्वच्छन्द प्रवृत्ति का अभाव था। ऐसी साध्वी स्त्रियां समाज में थी, जो परपुरूष के सम्मुख होकर बात नही करती थी, अपितु मध्य में तृण रखकर परोक्ष रूप से वार्ता करती थी37, ऐसी स्त्रियों को सब प्रकार के आचारशास्त्र का ज्ञान होता था।38 पतिव्रता स्त्रियां पतिव्रत धर्म की रक्षा हेतु प्राणोत्सर्ग भी करने के लिये तैयार रहती थी। समाज में एक पत्नी प्रथा का प्रचलन था, किन्तु सामन्त एवं राजपरिवारों में बहुपत्नी प्रथा का उल्लेख मिलता है। श्रेणिक के अन्तःपुर में हजार रानियों का उल्लेख प्राप्त होता है।39

स्त्रियों को धार्मिक अनुष्ठानों में भी भाग लेने की पूर्ण स्वतंत्रता थी। पति द्वारा अनुचित व्यवहार किये जाने पर भी पत्नी उन्हें दोष न देकर वह इसे अपने कर्मों का ही फल मानती थी और पति की कल्याण कामना के साथ उसे उचित सलाह देती थी। पति द्वारा परित्याक्ता सीता राम के प्रति कहती हैं – हे राम! आप उत्कृष्ट चेष्टा के धारक है, सद्गुणों से सम्पन्न है और पौरूषता से युक्त है। मेरे त्यागने में भी आपको लेश मात्र भी दोष नहीं है। जब मेरा अपना कर्म उदय में आ रहा है तब पति, पुत्र, पिता, नारायण अथवा अन्य परिवार के लोग क्या कर सकते है40 लेकिन इस तरह आप सम्यग्दर्शन को न छोडें, क्योंकि मेरे साथ वियोग को प्राप्त हुए आपको इसी भव में दुख होगा परन्तु सम्यग्दर्शन के छुट जाने पर तो भव–भव में दुख होगा।''41 अतः आप अपना हित चाहते है तो जिनेन्द्र देव की भक्ति को नही छोड़ना।42 इस प्रकार सीता रामजी को धर्म के रास्ते पर चलने को कहती है। इससे पुराणकालीन समाज की स्त्रियों में धर्म प्रभावना का पता चलता है।

बहन के रूप में – नारी :–

नारी कुल की मर्यादा का पालन किया करती थी तथा परिवार में नवागन्तुओं का आतिथ्य सत्कार करती थी। उल्लेखनीय है कि दशानन की बहन चन्द्रनखा ने अतिथियों का सत्कार करके अपने कुल का परिचय दिया।43 इसके अतिरिक्त नारी के जीवन काल में एक आकस्मिक स्थिति विधवा की भी आती है।

विधवा के रूप में – नारी :–

विधवा नारी जीवन की महत्वपूर्ण अवस्था है, क्योंकि इससे पतिविहीन नारी के प्रति पारिवारिक व सामाजिक व्यवहार का पता चलता है। वैधव्य अवस्था में नारी के सामाजिक उत्तरदात्वि और अधिकार वापस नही लिये जाते थे। उसे समाज में हेय भी नही समझा जाता था। विधवा पुनर्विवाह का प्रचलन नही था। विधवा नारियों का जीवन आध्यात्मिक कार्यों में अधिक व्यस्त रहता था।44 रावण की मृत्यु के पश्चात मन्दोदरी ने गृहस्थ सम्बन्धी समस्त वेष रचना छोड दी और अत्यन्त विशुद्ध धर्म में लीन होकर दीक्षा धारण कर ली।45 इस प्रकार पद्मपुराण कालीन समाज में प्रतिबिम्बित नारी जीवन के विविध रूप हमें दृष्टिगोचर होते हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि पद्मपुराणकालीन समाज में नारी का गौरवपूर्ण स्थान रहा है। भारतीय नारी के सभी स्वरूपों में एक सात्विकता थी, एक दिव्यत्व था, जो समाज के शिरोभाग को विभूषित करता था, और इस स्थान को प्राप्त करने के लिये उसे कोई संघर्ष नही करना पडता था, वरन् अपने प्राकृतिक गुणों की सहज अभिव्यक्ति में स्वभाव से ही उसे पुण्यपद प्राप्त था।

सन्दर्भ सूची

1. निरूक्त – 3.21, 2
2. हिन्दी काव्य में नारी – पृ. 40
3. पद्म पुराण – 17/53,
4. वहीं – 24/6,
5. वहीं – 24/7, 18–19,
6. वहीं – 24/20–21,
7. वहीं – 24/22–23,
8. वहीं – 24/24–26,
9. वहीं – 24/34–35,
10. वहीं – 24/37,
11. वहीं – 24/40,
12. वहीं – 24/46,
13. वहीं – 24/52,
14. वहीं – 24/56,
15. वहीं – 24/57,
16. वहीं – 24/59,
17. वहीं – 24/61–62,
18. वहीं – 24/63,
19. वहीं – 24/64,
20. वहीं – 24/68–69,
21. वहीं – 24/71–72,
22. वहीं – 24/81,
23. वहीं – 24/82,
24. वहीं – 15/20–24, 8/6,
25. वहीं – 24/121,
26. वहीं – 101/14–16,
27. वहीं – 24/86–90,
28. वहीं – 10/6–11,
29. वहीं – 21/126,
30. वहीं – 101/28–37,
31. वहीं – 81/79,
32. वहीं – 107/62,
33. वहीं – 26/150–157, 32/102
34. वहीं – 24/101,
35. वहीं – 3/152,
36. वहीं – 73/51–52,
37. वहीं – 46/11,
38. वहीं – 53/128,
39. वहीं – 2/34,
40. वहीं – 97/155–157,
41. वहीं – 99/40–41,
42. वहीं – 99/36,
43. वहीं – 8/31,
44. जैन संस्कृति कोश – पृष्ठ – 245–246,
45. पद्म पुराण – 78/63–64